वैदिक काल से पूर्व मध्यकाल तक आर्थिक दशा
(Economic Condition from Vedic Period to Pre Medieval Period)

■ वैदिक काल (1500 ई.पू.-1000 ई.पू.)

ऋग्वैदिक आर्यों की संस्कृति मूलत: ग्रामीण थी। उसकी अर्थव्यवस्था एक प्रकार की निर्वाह मूलक अर्थव्यवस्था थी। अर्थव्यवस्था का आधार मुख्यत: पशुचारण था, कृषि की भूमिका अपेक्षाकृत द्वितीयक थी। इस काल में पशुचारण को इतना महत्त्व दिया जाता था कि जीवन से जुड़ी हुई महत्त्वपूर्ण गतिविधियों को गाय से जोड़ दिया गया था। उदाहरण के लिये, राजा के लिए 'गोप', समय की माप के लिये 'गोधूलि' इत्यादि। ऋग्वैदिक अर्थव्यवस्था में कृषि को विशेष महत्व प्राप्त नहीं होने की वजह से सीमित कृषि अधिशेष की स्थिति थी। इस वजह से अर्थव्यवस्था में शिल्प एवं व्यापार की भूमिका भी सीमित थी। शिल्प के रूप में ताँबे अथवा काँसे का प्रयोग होता था, जिसे 'अयस' कहा जाता था। व्यापारी के रूप में एक 'पणि' नामक व्यापारी की चर्चा मिलती है जो गैर-आर्य थे। इस काल में नियमित मुद्रा का प्रचलन नहीं हुआ था और मुद्रा के रूप में हमें निष्क एवं शतमान का विवरण मिलता है। निष्क सम्भवत: आभूषण होता था और शतमान 100 गायों की संख्या बताता था। ऋग्वैदिक अर्थव्यवस्था ग्रामीण अर्थव्यवस्था थी क्योंकि ऋग्वेद में 'नगर' शब्द की चर्चा नहीं मिलती।

■ उत्तर वैदिक काल (1000 ई.पू.-600 ई.पू.)

उत्तर वैदिक काल की अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्व बढ़ गया था। जहाँ ऋग्वेद में फसल के रूप में केवल यव (जौ) का विवरण मिलता है, वहीं उत्तर वैदिक काल में गोधूम (गेहूँ) एवं ब्रीही (चावल) का भी विवरण प्राप्त होता है। उत्तर वैदिक काल में भी शिल्प एवं व्यापार का सीमित विकास देखा गया। इस काल के ग्रंथों में व्यापारियों की अनेक श्रेणियों का उल्लेख मिलता है। 'श्रेष्ठिन' श्रेणी का प्रधान व्यापारी होता था। व्यापार में ब्याज पर धन देने (कुसीदिन) का भी प्रचलन था। फिर भी अभी नियमित सिक्के का प्रचलन आरम्भ नहीं हुआ था, यद्यपि मुद्रा के रूप में एक नई मुद्रा 'कृष्णल' का विवरण मिलता है, जो निष्क और शतमान के अतिरिक्त है। उत्तर वैदिक अर्थव्यवस्था भी ग्रामीण अर्थव्यवस्था ही बनी रही, यद्यपि तैत्तरीय आरण्यक नामक ग्रंथ में 'नगर' शब्द की चर्चा मिलती है। इस प्रकार उत्तर वैदिक अर्थव्यवस्था में वैदिक काल की तुलना में ठोस परिवर्तन देखने को मिलता है।

■ बुद्ध काल (600 ई.पू.-400 ई.पू.)

इस काल में कृषि अर्थव्यवस्था में व्यापक परिवर्तन देखा गया। मध्य दोआब क्षेत्र में जंगलों की सफाई हुई तथा कृषि का प्रसार हुआ। गेहूँ की तुलना में चावल की उपज अधिक थी। फिर इस काल में लोहे के उपकरणों का प्रयोग कृषि में होने लगा था। वैसे तो उत्तर वैदिक काल में भी लोहे का प्रचलन शुरू हो गया था और उसे 'श्याम आयस' अथवा 'कृष्ण अयस' कहा जाता था, परन्तु उसका उपयोग मुख्यत: युद्ध उपकरण के रूप में हुआ था। कृषि अधिशेष ने शिल्प एवं कारीगरी के विकास को प्रोत्साहन दिया। इससे व्यापार के विकास को भी प्रोत्साहन मिला। पहली बार इस काल में नियमित मुद्रा के रूप में आहत सिक्कों (पंच मार्क्ड सिक्कों) का प्रचलन आरम्भ हुआ। आहत मुद्राएं अधिकतर चाँदी की होती थीं, किंतु चाँदी, ताँबे, मिश्रित मुद्राएँ और केवल ताँबे की मुद्राएँ भी मिली हैं। सबसे बढ़कर, इस काल में द्वितीय नगरीकरण का आरम्भ हुआ। जहाँ प्रथम नगरीकरण का आधार सिंधु घाटी ने तैयार किया, वहीं द्वितीय नगरीकरण का आधार मध्य गंगा घाटी ने। बौद्ध ग्रंथों में उत्तर भारत में 60 नगरों का जिक्र मिलता है, इनमें 6 महानगर थे।

■ मौर्य काल (400 ई.पू.-200 ई.पू.)

इस काल में अर्थव्यवस्था को और भी अधिक प्रोत्साहन मिला क्योंकि कृषि, शिल्प एवं व्यापार, सभी क्षेत्रों में राज्य की भागीदारी हुई।

- **कृषि**- कृषि के क्षेत्र में राज्य की भागीदारी थी। राज्य की भूमि 'सीता भूमि' कहलाती थी, जिसमें खेती का कार्य सीताध्यक्ष नामक अधिकारी के अन्तर्गत होता था। इसमें दासों, युद्धबंदियों तथा शूद्रों को लगाया जाता था। फसलों के रूप में हमें गेहूँ, जौ, चावल, विभिन्न प्रकार की दालें तथा कपास एवं गन्ना की सूचना मिलती है। राज्य की ओर से सिंचाई के विकास के लिए कदम उठाये जाते थे। चंद्रगुप्त के एक अधिकारी पुष्यगुप्त ने सुदर्शन झील का निर्माण किया था।

उसी प्रकार, कुछ शिल्प एवं कारीगरी पर राज्य का एकाधिकार होता था, उदाहरण के लिए, लौह उपकरण, जहाजों का निर्माण, खनन उद्योग आदि। इस काल में वस्त्र निर्माण एक महत्वपूर्ण उद्योग था।

- **व्यापार**– इस काल में वाणिज्य-व्यापार में भी राज्य की भागीदारी थी। राजकीय वस्तु 'राजपण्य' कहलाती थी। व्यापारिक गतिविधियाँ पण्याध्यक्ष नामक अधिकारी के निरीक्षण में रखी गई थीं। राज्य के द्वारा वस्तुओं पर सीमा शुल्क एवं व्यापारिक कर लगाये जाते थे। मौर्यकाल में व्यापारिक मार्ग के रूप में उत्तरापथ का प्रचलन था। उत्तरापथ पूरब में ताम्रलिप्ति बंदरगाह को पश्चिम में भड़ौच से तथा उत्तर-पश्चिम में तक्षशिला से जोड़ता था। इसके अतिरिक्त कौटिल्य के अर्थशास्त्र में दक्षिणापथ

की भी चर्चा हुई है।

- **मुद्रा अर्थव्यवस्था तथा नगरीकरण**– इस काल में आहत मुद्राओं की प्रचुरता विकसित मुद्रा अर्थव्यवस्था को दर्शाती है। किंतु ये आहत मुद्राएं राज्य के द्वारा नहीं, वरन् निगमों के द्वारा जारी की जाती थीं। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में 'पण' नामक सिक्कों का जिक्र मिलता है, जो चाँदी का सिक्का होता था। फिर इस काल में विकसित वाणिज्य–व्यापार तथा बेहतर प्रशासनिक गतिविधियों ने नगरीकरण की प्रक्रिया को बल प्रदान किया। अशोक के अभिलेखों में पाटलिपुत्र के अतिरिक्त सात नगरों का जिक्र हुआ है।

■ मौर्योत्तर काल

मौर्योत्तर काल आर्थिक क्षेत्र में चतुर्दिक विकास का काल था। यह वही काल है जहाँ एक तरफ कृषि अर्थव्यवस्था का प्रसार हुआ, वहीं दूसरी तरफ शिल्प, वाणिज्य–व्यापार एवं नगरीकरण की प्रक्रिया को गति मिली। इस काल में द्वितीय नगरीकरण का चरमोत्कर्ष देखने को मिलता है।

- **कृषि :** भूमि अनुदान के माध्यम से दूरवर्ती क्षेत्रों में कृषि का प्रसार हुआ। फिर इस काल में कृषि के प्रसार में निजी व्यक्ति की भूमिका पर भी विशेष बल दिया गया। उदाहरण के लिए, मनु कहता है कि भूमि उसकी होती है जो उसके घास–भूसे को साफ कर आबाद करता है। स्वयं राज्य की ओर से भी सिंचाई के प्रोत्साहन के लिए कदम उठाया जाता था। उदाहरण के लिए, रूद्रदामन ने सुदर्शन झील की मरम्मत कराई।

- **शिल्प अथवा उद्योग:** इस काल में शिल्प एवं उद्योगों में व्यापक विस्तार देखा गया। इस काल के एक ग्रंथ 'मिलिन्दपन्हो' में 75 प्रकार के व्यवसाय की सूचना मिलती है, जिनमें 60 स्पष्ट रूप में शिल्पों से जुड़े हुए हैं। फिर इस काल में अलग–अलग क्षेत्र में अलग–अलग प्रकार के उत्पादों का जिक्र मिलता है। उदाहरण के लिए, उज्जैन मनका बनाने के कार्य हेतु प्रसिद्ध था, मथुरा एक विशेष प्रकार के वस्त्र 'शाटक' के उत्पादन के लिए प्रसिद्ध था। उसी प्रकार, दक्षिण में अरिकामेडु और उरैयुर वस्त्रों की रंगाई के काम के लिए जाना जाता था।

- **व्यापार:** इस काल में आन्तरिक एवं बाह्य व्यापार में व्यापक विस्तार देखा गया। बाह्य व्यापार में रेशम मार्ग की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। इसका संचालन चीन का हान साम्राज्य, भारत का कुषाण साम्राज्य तथा यूरोप का रोमन साम्राज्य करता था। इस व्यापार से भारत को बहुत लाभ था।

भारत से रोम की ओर निर्यात की प्रमुख मदें थीं– मसाले, विशेषकर काली मिर्च (यवनप्रिय), रेशम, लोहे के उपकरण, कीमती पत्थर, औषधि की वस्तुएँ। वहीं रोम से आयात होने वाली सामग्रियाँ थीं कीमती धातु (सोने व चाँदी), शराब एवं शीशे से निर्मित जाम, सीसा, अरेटाइन मृद्भांड। व्यापार संतुलन निश्चय ही भारत के पक्ष में था क्योंकि रोमन लेखक प्लिनी ने रोम से भारत की ओर धन की निकासी की बात कही है।

इस काल में कई महत्वपूर्ण बन्दरगाहों का विकास हुआ। उदाहरण के लिए, उत्तर में दो महत्वपूर्ण बन्दरगाह, बारबरीकम सिन्धु नदी के मुहाने पर तथा बेरीगाजा (भड़ौच) गुजरात तट पर स्थित थे। पूरब में ताम्रलिप्ति भी एक महत्वपूर्ण बन्दरगाह था। इसके अतिरिक्त कुछ बन्दरगाह, यथा– टिण्डिस, मुजिरिस, नेलसिण्डा आदि मालाबार तट पर तथा अरिकामेडु, कावेरीपट्टनम एवं कोरकई आदि कोरोमंडल तट पर स्थित थे।

- **मुद्रा व्यवस्था:** प्राचीन काल में सबसे अधिक मुद्राएँ मौर्योत्तर काल में ही जारी की गईं। इस काल में सोने, चाँदी, ताँबे, टिन एवं सीसे के सिक्के भी चलाए गए। रोम के दीनार पैटर्न पर सबसे विशुद्ध सिक्के कुषाणों ने चलाए। सातवाहनों ने सीसे के सिक्के भी चलाए।

- **नगरीकरण:** इस काल में नगरीकरण अपनी चरम अवस्था में पहुँच गया। इस काल में कुषाण शासकों के अन्तर्गत मथुरा, बनारस आदि नगरों का विकास हुआ, वहीं शकों के अन्तर्गत उज्जैन एक प्रमुख नगर के रूप में विकसित हुआ। यह काल प्रायद्वीपीय भारत में प्रथम नगरीकरण का काल था। सातवाहनों के अधीन तगर, पैठान, अमरावती, नागार्जुनकोंड ये सभी नए नगर के रूप में विकसित हुए। सुदूर दक्षिण में भी नगरों का विकास हुआ। उदाहरण के लिए, मुजिरिस, अरिकामेडु, कावेरीपट्टनम ये सभी बंदरगाह नगर के रूप में विकसित हो गए थे।

■ गुप्त काल

गुप्त काल को आर्थिक क्षेत्र में समृद्धि का काल माना गया है।

- **कृषि अर्थव्यवस्था:** भूमि अनुदान के कारण कृषि अर्थव्यवस्था का प्रसार हो रहा था। फसलों की संख्या में भी वृद्धि हो रही थी। इस काल में बागवानी फसलों की खेती को प्रोत्साहन मिला। वराहमिहिर की 'वृहत्संहिता' में फलों के पौधों के लिए कलम बाँधने की प्रथा का जिक्र है। फिर इस काल में सिंचाई के लिए राज्य की ओर से किये गए प्रयासों के उदाहरण भी मिलते हैं। जैसे– स्कन्दगुप्त के काल में 'सुदर्शन झील' की मरम्मत। फिर सिंचाई के लिए कुँए से पानी निकाला जाता था, इसे 'अरघट्ट' कहा जाता था। पहली बार इसकी चर्चा सातवाहन कालीन रचना 'गाथासप्तशती' में मिलती है। आगे बाणभट्ट ने इसके लिए 'घटीयंत्र' शब्द का प्रयोग किया है।

- **शिल्प एवं उद्योग:**

गुप्त काल में शिल्प एवं उद्योग उन्नत अवस्था में था। इस काल में सूती वस्त्र, रेशमी वस्त्र एवं ऊनी वस्त्र के उत्पादन को

विशेष प्रोत्साहन मिला। वस्त्र उत्पादन के चार प्रमुख केंद्र थे– मथुरा, बनारस, दासपुरा एवं कामरूप। अजंता के चित्र तथा कालिदास की रचनाओं से उत्तम प्रकार के वस्त्रों की झलक मिलती है। इसके अतिरिक्त धातुकर्म की दृष्टि से भी गुप्तकाल विशिष्ट है। दिल्ली के मेहरौली स्थित लौह स्तंभ बेहतर प्रकार के शिल्प निर्माण का ज्ञान कराता है। इसके अतिरिक्त बिहार के सुल्तानगंज से प्राप्त काँसे की निर्मित बुद्ध की एक टन की मूर्ति भी बेहतर धातु शिल्प की ओर संकेत करती है। वात्स्यायन के कामसूत्र में भी धातुकला को 64 कलाओं में शामिल किया गया है।

- **व्यापार:** इस काल में पश्चिमी रोमन साम्राज्य के साथ भारत के व्यापार को धक्का लगा, परन्तु पूर्वी रोमन साम्राज्य के साथ भारत के व्यापारिक संबंध स्थापित हो गए थे। इसलिए इस काल में कुल मिलाकर आर्थिक संवृद्धि बनी रही। गुप्त शासकों ने सर्वाधिक संख्या में सोने के सिक्के जारी किए। इस काल के लेखक वात्स्यायन के 'कामसूत्र' में समृद्ध नगरीय जीवन का जिक्र मिलता है। विदेशी यात्री फाह्यान ने भी मध्य देश और पाटलिपुत्र की संवृद्धि की चर्चा की है।

परन्तु गुप्त काल के अन्त में पूर्वी रोमन साम्राज्य के साथ भारत का व्यापारिक संबंध टूट गया और इसके साथ व्यापार को धक्का लगा।

■ गुप्तोत्तर काल

कृषि अर्थव्यवस्था के प्रसार की दृष्टि से यह अभूतपूर्व विकास का काल था। भूमि अनुदान के माध्यम से कृषि अर्थव्यवस्था का प्रसार होता रहा। फिर इस काल में सिंचाई के विकास को प्रोत्साहन मिला। इसके लिए कुओं, जलाशय और तालाब का प्रयोग होता था। फिर इस काल में बागवानी फसलों के उत्पादन को भी प्रोत्साहन मिला।

परन्तु दूसरी तरफ यह काल नगरीकरण, मुद्रा अर्थव्यवस्था तथा व्यापार के पतन का काल सिद्ध हुआ।

■ पूर्व मध्यकाल

इस काल में भी कृषि अर्थव्यवस्था का प्रसार होता रहा। नए भू–भाग का आबाद होना, नई फसलों का प्रचलन, सिंचाई का विकास सभी पूर्वकालीन अवस्था में बना रहा।

परन्तु हम व्यापार, मुद्रा अर्थव्यवस्था और नगरीकरण की स्थिति को दो भिन्न अवस्थाओं में बाँटकर देख सकते हैं–

- **प्रथम अवस्था (750–1000 ई.)**– इस काल में व्यापार, मुद्रा अर्थव्यवस्था और नगरीकरण पतनशील अवस्था में ही बने रहे।
- **दूसरी अवस्था (1000 ई.–1200ई.)**– इस काल में बाह्य व्यापार एवं आन्तरिक व्यापार दोनों पुनर्जीवित हुए। पश्चिम एशिया में एक वृहद् अरब साम्राज्य के निर्माण ने भारतीय वस्तुओं की माँग बढ़ा दी। व्यापार के पुनर्जीवित होते ही मुद्रा अर्थव्यवस्था और नगरीकरण भी पुनर्जीवित हुआ। इसे 'तृतीय नगरीकरण' का भी नाम दिया जाता है।